अध्याय–1

शोध परिचय

अध्याय–1

शोध परिचय

1.1. प्रस्तावना :–

शिक्षा से सिर्फ यही तात्पर्य नहीं है कि, वह मनुष्य की जीवनोपार्जन की आधारभूत बने, बल्कि उसका जीवन वह सुव्यवस्थित सफलता के साथ आत्मविकास करके जीये उसी में है। जीवन के किसी भी पडाव पर उसको निराश न होने दे, उपरांत उसको आगे का रास्ता दिखाए और सही ढंग से पेश आने की आंतरिक व बाह्य दोनों शक्ति प्रदान करें। मनुष्य–मनुष्य आपस में सुख–शान्ति व सहकार से रहे यह भी शिक्षा से अनिवार्य व अपेक्षित समझा जाता है। आजकी शिक्षा के सन्दर्भ में देखा जाए तो बालक का आधा से ज्यादा समय स्कूल में ही पसार होता है, तब शिक्षा का कर्तव्य सिर्फ उसको उत्तम नागरिक बनाने के साथ–साथ एक उमदा इन्सान बनाना भी रह जाता है। आजके अत्यंत गतिशील युग में उसकी भावना, संवेग, आत्मसम्मान, आत्मिक गति और मनुष्यत्व के उत्तम गुणों का विकास होता रहे यह निर्विवाद अपेक्षा को टाला नहीं जा सकता। इसलिए शालेय पाठ्यक्रम में इन्सानियत के गुण विकसित हो ऐसे पाठ व प्रवृत्तियों का समावेश होना ही चाहिए, जिसका संबंध सीधे मूल्य शिक्षा से है। इस मूल्यशिक्षा से बालक में बचपन से ही इन्सानियत का विकास होगा, जो उसको उत्तम नागरिक के साथ साथ एक उमदा इन्सान भी बनायेगी।

1.2. शिक्षा में मूल्य का महत्व :–

‘भारतीय जीवन मूल्य’ ग्रन्थ में कामिनी कामायनी का करना है कि, ‘प्रेम, प्यार, सत्य न्याय सौहार्द सहिष्णुता, संवेदनशीलता तथा पुरूषार्थ जैसे दिव्य मूल्यों को अपने अंदर प्रतिष्ठित करके जो मनुष्य अपने लिए अंतहीन रसमय और परम शांतियुक्त निर्भय जीवन बिताने का अधिकारी बन सकता है, वहीं मनुष्य इनके ठीक विपरीत जीवन मूल्यों को धारण करके नीरसता,

अशांति और अंतहीन भययुक्त जीवन को अपनाकर स्वयं को अनेकोनेक मानसिक तनावों से ग्रस्त पा रहा है। अजूबा यह है कि, यह फिर भी निरंतर अपने लिए शांति प्राप्त करने की आशा में उसी दिशा में जीता चला जा रहा है।'

इस संदर्भ में देखा जाये तो आज विज्ञान एवं तकनीकी के अत्यंत तीव्र गति से विकसित होने के कारण मानव जीवन अत्यंत जटिल हो गया है। उसकी समस्याएँ भी नितनई दिशाओं की ओर बढ़ती जा रही हैं। विज्ञान द्वारा मनुष्य का यांत्रिक विकास हुआ है, हृदयिक विकास नहीं। उसमें क्रिया है, चेतना नहीं। उसके असन-व्यसन आदि प्रायः सभी कार्य यंत्रवत हो गये हैं, फिर भी ऐसी परिस्थितियों में आशा की किरण कही नजर आती है तो वह है - शिक्षा। अतः प्राथमिक स्तर से ही शिक्षा द्वारा बालक को मूल्यों एवं शांति के पाठ पढ़ाये जाये और उसकी जीवन में आगे भी सराहना हो इसलिए पाठ्यक्रम में प्राथमिक स्तर से ही उसका आना जरूरी है जो आज हो रहा है। इस संदर्भ में एन.सी.एफ. 2005 में कहा गया है कि, ''शिक्षा को उन मूल्यों को प्रसारित करने में सक्षम होना चाहिए, जो शांति, मानवता और सांस्कृतिक विविधता वाले समाज में सहिष्णुता को पोषित करें व शांति की संस्कृति का निर्माण करना शिक्षा का निर्विवाद उद्देश्य है।''

1.3. मूल्य का अर्थ :-

शाब्दिक रूप में यदि देखा जाये तो 'मूल्य' को अंग्रेजी में 'Value' कहते है। और 'Value' लैटिन भाषा का शब्द 'वैलियर' से बना है, 'वैलियर' का अंग्रेजी में अर्थ हैः एबिलिटी, युटिलिटी, इम्पोर्टन्ट तथा हिन्दी में अर्थः योग्यता, उपयोगिता, महत्व। शाब्दिक अर्थ के आधार पर हम यह कह सकते है कि, व्यक्ति या वस्तु का वह गुण जिसके कारण उसका महत्व, सम्मान या उपयोग समझा जाता है- वह 'मूल्य' है। 'मूल्य' से आशय यह वस्तुयें या बातें हैं, जिनमें व्यक्ति रूचि लेता हैं।

'मूल्य' शब्द से अभिप्राय भावात्मक दृष्टि से मानव के गुणों को अभिव्यक्त करना हैं। हिन्दी में 'मूल्य' शब्द के पर्याय में 'आदर्श', 'शील' व 'गुण' आदि शब्दों का भी प्रयोग किया जाता हैं।

'मूल्य' की चर्चा विभिन्न विचारकों ने की है :

1. **सुखवादी** :- सुखवादी या सुखदायी विचारकों का यह मानना है कि,मूल्य वह है जो मनुष्य इच्छा को तृप्त करतें हैं।

2. **विकासवादी** :- विकासवादी विचारकों का मानना है कि, 'मूल्य' वह है जो जीवन वर्धक होते हैं।

3. **पूर्णतावादी** :- पूर्णतावादी विचारकों की धारणा है कि, 'मूल्य' वह है जिससे आत्मलाभ या आत्मोन्नति होती है।

1.4. मूल्य की व्याख्या :-

मूल्य किसी वस्तु या स्थिति का वह गुण है जो समालोचना व वरीयता प्रकट करता है। यह एक आदर्श या इच्छा है जिसे पूरा करने के लिए व्यक्ति जीता है तथा आजीवन प्रयास करता रहता है। दूसरे शब्दों में मूल्यों को आदर, सौंदर्य, कुशलता या महत्व का मानदण्ड माना गया है, जिनके सहारे हम जीते है, जिन्हें हम कायम रखने की कोशिश करते हैं।

1.5. मूल्य की परिभाषाएँ :-

विभिन्न विचारकों ने मूल्यों के संबंध में अनेक परिभाषाएँ दी है। इन परिभाषाओं को हम तीन श्रेणियों में विभाजित कर सकते है :

1. दार्शनिक विचारधारा।
2. मनोवैज्ञानिक विचारधारा।
3. समाजशास्त्रीय विचारधारा।

(1) दार्शनिक विचारधारा :-

दर्शनशास्त्र के संबंध में यह धारणा रखना है कि, मूल्य एक शुद्ध सूक्ष्म तत्व है। इसके अंतर्गत हम मूल्य की परिभाषाओं को तीन भागों में विभक्त कर सकते हैं :

- **वैयक्तिक परिभाषाएँ :-**

वैयक्तिक संदर्भ में मूल्यों का संबंध हमारी भावनाओं एवं संवेगों, पसंद एवं नापसंद से होता है जो खास करके व्यक्ति की इच्छा संतुष्टि से संबंधित है।

- **वस्तुनिष्ठ परिभाषाएँ :-**

इस अर्थ से अभिप्राय है कि, मूल्य का अर्थ व्यक्ति या उसकी आन्तरिक भावनाओं से नहीं है अथवा यह आंतरिक जगत की वस्तु नहीं है वरन् मूल्य का अर्थ वस्तु से होता है।

- **तार्किक परिभाषाएँ :-**

इस आधार पर लोगों का विचार है कि, मूल्य का संबंध मानव तथा उसके वातावरण दोनों से ही होता हैं। इस कारण वह व्यक्तिनिष्ठ भी होते हैं, वस्तुनिष्ठ भी। डॉ. राधाकमल मुखर्जी के शब्दों में, "समाज में समस्त ऐसी इच्छाएँ या अभिलाषायें मूल्य कही जाती हैं जो कि, अनुबन्धन की प्रक्रिया द्वारा व्यक्ति में अंतर्निहित हो जाती हैं जो कि, समाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा भी उस व्यक्ति की प्राथमिकताओं, रूचियों, महत्वाकांक्षाओं के रूप में प्रकट होती है।"

2. मनोवैज्ञानिक विचारधारा :-

मनोवैज्ञानिक विचारधारा यह मानती है कि, मूल्य व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक आवश्यकता है और इस दृष्टि से मूल्य वह वस्तु, परिस्थिति या क्रिया है, जिसमें व्यक्ति संतुष्टि महसूस करता है। मरफी व न्यूकाम के अनुसार मूल्य का अर्थ है - लक्ष्य प्राप्ति की ओर उन्मुख होना।

जोन्स के अनुसार, "मूल्य वह प्रेरणा है जो व्यक्ति के प्रयासों को संतृष्ट करती है, जिससे वह अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सके।"

3. समाजशास्त्रीय विचारधारा :-

समाजशास्त्रीय विचारधारा मूल्यों को सामाजिक विचारों, मान्यताओं परम्पराओं व विश्वासों पर आधारित मानती है। इस संबंध में ननली का विचार है - "जीवन के लक्ष्यों एव जीवन प्रक्रिया के प्रति मूल्य प्राथमिकता रखते हैं, बजाय किसी विशिष्ट कार्य के प्रति रूचि रखने के।"

वास्तव में यदि देखा जाये तो मूल्य वह है जो सभी बातो का निर्धारण करतें हैं। वास्तव में यह मूल्य ही है, जो इस जगत को अर्थ प्रदान करते हैं। साथ ही प्रत्येक व्यक्ति, घटना, क्रिया को अर्थ प्रदान करतें हैं। इस जगत में होनेवाला छोटा-सा परिवर्तन मूल्यों के परिवर्तन के फलस्वरूप ही होता है व उसे मूल्यों के आधार पर हीं समझा जा सकता है।

1.6. मूल्यों का वर्गीकरण :-

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली द्वारा प्रस्तावित तिरासी नैतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक मूल्यों का परिगणन किया गया है। इस संदर्भ में संपादक श्री बी.आर. गोयल का कहना है कि, इन मूल्यों का निर्धारण विविध शैक्षणिक आयोगों तथा समितियों के प्रतिवेदनों तथा गांधी-साहित्य के अध्ययन के आधार पर किया गया है। जिसका विवरण अगले पृष्ठ पर किया गया हैं।

तिरासी मूल्य :-

1	ब्रह्मचर्य	22	समानता	43	राष्ट्रीय जागृति	64	आत्मोपजीवन
2	दूसरों के सांस्कृतिक मूल्यों को पसंद करना	23	मित्रता	44	अहिंसा	65	स्वाध्याय
3	अस्पृश्यता का बहिष्कार करना	24	विश्वसनीयता	45	राष्ट्रीय एकात्मता	66	आत्मनिर्भरता
4	नागरिकता	25	भाईचारा	46	आज्ञापालन	67	आत्मनियंत्रण
5	दूसरों के प्रति सहानुभूति	26	स्वाधिनता	47	शांति	68	आत्मसंरक्षण
6	दूसरों से सरोकार रखना	27	सरलता	48	समय का सदुपयोग	69	समाज–सेवा
7	सहयोग	28	अच्छा तौर–तरीका	49	समय शीलता	70	मानवमात्र की एकता
8	स्वच्छता	29	सज्जनता	50	देशभक्ति	71	सद्सदविवेक
9	करूणा	30	कृतज्ञता	51	शुद्धता	72	सामाजिक उत्तरदायित्व
10	परोपकार	31	ईमानदारी	52	ज्ञान के प्रति जिज्ञासा	73	समाजवाद
11	सबकी भलाई	32	दूसरों की सहायता करना	53	साधन सम्पन्नता	74	सहानुभूति
12	साहस	33	मानवीय दृष्टिकोण	54	नियमितता	75	धर्मनिरपेक्षता एवं सर्वधर्म समभाव
13	सौजन्य	34	स्वस्थ–वृत्त	55	दूसरों के प्रति सम्मान	76	अन्वेषण–वृत्ति
14	जिज्ञासा	35	स्वयंप्रेरित होकर कार्य करना	56	वृद्धों के प्रति श्रद्धा	77	सामूहिक कार्य में निष्ठा
15	प्रजातांत्रिक निर्णय लेना	36	आत्मनिष्ठा	57	निष्ठा	78	समूह–वृत्ति
16	भक्ति–भावना	37	न्याय	58	सादा जीवन	79	सत्यता
17	व्यक्ति की गरिमा का आदर करना	38	दयालुता	59	सामाजिक न्याय	80	सहनशीलता
18	शारीरिक श्रम की गरिमा का आदर करना	39	जानवरों के प्रति दयाभाव	60	आत्मानुशासन	81	सार्वजनीन सत्य
19	कर्तव्य–भावना	40	कर्तव्य के प्रति निष्ठा	61	स्वावलंबन	82	विश्व–बन्धुत्त्व
20	अनुशासन	41	नेतृत्त्व	62	आत्मसम्मान	83	राष्ट्रीय एवं सार्वजनिक संपत्ति की रक्षा करना।
21	सहिष्णुता	42	राष्ट्रीय एकता	63	आत्म विश्वास		

तिरासी जीवन मूल्यों की उक्त सूची में कहीं कहीं पुनरावृत्ति का आभास होगा। वस्तुतः मानवीय मूल्यों की प्रकृति ही ऐसी है कि, एक दूसरे मूल्य से किसी न किसी प्रकार, प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में जुड़ा होता है। अतः एक मानव-मूल्य की छाया दूसरे में, दूसरे का प्रभाव तीसरे पर एवं किसी मूल्य-समूह की संगति किसी शाश्वत मूल्य से होना स्वाभाविक है। अतः मानवीय मूल्यों की कोई निश्चित संख्या बताना बड़ा मुश्किल कार्य है।

फिर भी विद्यावाचस्पति डॉ. नत्थूलाल गुप्त 'अग्रहरि' द्वारा अपनी विद्धता के अनुसार मूल्यों का वर्गीकरण निम्नानुसार किया है। जो तिरासी जीवन-मूल्यों तथा पाँच मूलभूत मूल्य (सदाचरण, सत्य, शांति, प्रेम और अहिंसा) के आधार पर तैयार किया गया है। यह मूल्यों आठ श्रेणी में विभक्त है, इसका विवरण निम्न प्रकार है :

1. शैक्षणिक मूल्य :-

शिक्षा के क्षेत्र में अध्ययन- अध्यापन, अनुशासन, नियम पालन आदि मूल्य शैक्षिक मूल्य कहलाते हैं। इन मूल्यों के अन्तर्गत आने वाली प्रमुख बातें इस प्रकार रखी जा सकती है :

- अध्यापन में नियमितता एवं निष्ठा,
- मूल्यांकन में वस्तुनिष्ठता एवं निष्पक्षता,
- शोध एवं प्रकाशन के संबंध में ईमानदारी,
- स्वस्थ प्रतियोगिता की भावना,
- उत्कृष्ट से उत्कृष्टतर बनने की भावना,
- व्यवसाय के प्रति आस्था,
- विद्यार्थियों को तथा स्वयं की सृजनात्मकता का पोषण और
- मौलिकता के प्रति सद्भाव ताकि पूर्वाग्रहों एवं दुराग्रहों के अनिष्टो को टाल सके।

2. नैतिक मूल्य :-

ईमानदारी, त्याग, निष्ठा, उत्तरदायित्व की भावना, करूणा, दया, आदि नैतिक मूल्य कहलाते हैं। देश, काल एवं अन्य परिस्थितियों में ये कभी-कभी विवादास्पद हो जाते हैं। वस्तुतः यह विवाद कभी-कभी दो प्रकार की इच्छाओं की टकराहट के कारण होता है, जिसे मनोविश्लेषणवादी 'आंतरिक द्वंद्व' की संज्ञा देते है। जोन डिवी के शब्दों में, ''जब कोई द्वंद्व पैदा होता है तो वह इच्छा और तर्क के बीच होता है, जिनमें से एक किसी निकटवर्ती वस्तु को चाहता है और दूसरा किसी ऐसी वस्तु को चाहता है, जो एक लम्बी कार्य-श्रृंखला के बाद यानी 'अन्ततोगत्वा' उपलब्ध होती है। यह संघर्ष विचार में प्रस्तुत दो वस्तुओं के बीच होता है; जिसमें से एक ऐसी ईच्छा या तृष्णा के अनुरूप होती है जो बिलकुल अलग-अलग होती है और दूसरी एक ऐसी इच्छा के अनुरूप होती है जो अन्य इच्छाओं के साथ संबद्ध और सापेक्ष रूप में सोची जाती है।''

3. सामाजिक राजनीतिक मूल्य :-

इनके अंतर्गत राष्ट्रीय एकता, अन्तर्राष्ट्रीय भावना जैसे मूल्य समाहित होते हैं। सामाजिक दायित्व, आदर्श नागरिकता, प्रजातंत्र और मानववाद, आदि मूल्य समाज एवं राजनीति दोनों का स्पर्श करते हैं। वस्तुतः सामाजिक परिस्थितियाँ ही मनुष्य के दूरदर्शितापूर्ण एवं वृद्धिवादी रवैये के निर्माण को प्रभावित करती हैं। मनुष्य पर सामाजिक परंपराओं एवं प्रथाओं का प्रभाव किसी प्रकार की औपचारिक शिक्षा की तुलना में कम नहीं होता।

किसी भी समाज अथवा देश की सामाजिक राजनैतिक प्रणाली के परिक्षण, परिष्कार एवं संवर्धन के लिए ये सामाजिक तथा राजनैतिक मूल्य अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं। व्यक्ति समाज की अन्यतम इकाई है। व्यक्तियों से ही समाज का और समाज से व्यक्तियों का अस्तित्व बनता है। व्यक्तियों के नैतिक मूल्यों का समवाय ही सामाजिक मूल्यों की संरचना में सहायक होता

है। अतः नीति एवं सामाजिक मूल्यों की संरचना में सहायक होना। अतः नीति एवं सामाजिक मूल्यों में व्याप्त भेद अत्यंत सूक्ष्म होता है। विविध सामाजिक राजनैतिक मूल्यों में 'राष्ट्रीय एकता' का विशेष महत्व है। शैक्षिक जगत में इसका मूल्य और भी बढ़ जाता है, क्योंकि शिक्षा के विभिन्न अभिकरण 'राष्ट्रीय एकता' को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

4. विज्ञानपरक मूल्यः-

वस्तुनिष्ठता, तर्कप्रवणता, तथ्यपरकता एवं गवेषणात्मक दृष्टिकोण इस मूल्य में प्रमुख घटक है। जीवन में इस मूल्य को बड़ी सूझ-बूझ के साथ आत्मसात् करना या कराना चाहिए। यह जीवन-मूल्य एक ओर सद्सदविवेक बुद्धि को जगाकर हमारी अनेक भ्रांतियों एवं अंधविश्वासों को दूर करता है; वहीं दूसरी ओर यदि इसे विवेकबुद्धि के साथ आत्मसात् न किया गया या करवा गया तो यह मनुष्य में अनास्था एवं अनात्मवाद का बीजारोपण करता है।

विज्ञानपरक ज्ञान के संबंध में एक बात विशेष महत्व की है, वह यह कि, विज्ञानपरक ज्ञान हमे कार्यो को संपादित करने की दिशा अवश्य बताता है; किन्तु जीवन का लक्ष्य निर्धारित करने में वह हमारी सहायता नहीं करता। यदि हम एक बार अपना लक्ष्य निर्धारित कर लेते है तो विज्ञान हमें कार्य करने की प्रविधि एवं उसकी सूक्ष्म प्रक्रिया का ज्ञान करा सकता है; किन्तु वह हमें यह नहीं बताता कि, कौनसा लक्ष्य श्रेयस्कर है और कौनसा अश्रेयस्कर। विज्ञानपरक ज्ञान की इस सीमा को ध्यान में रखते हुए ही हमें विज्ञान-बुद्धि का प्रयोग जीवन में करना चाहिए। आचार्यो ने इसीलिए विज्ञान और धर्म के समन्वय की आवश्यकता पर बल दिया है। लक्ष्य निर्धारित करने के लिए धर्मपरक चिंतन आवश्यक है, तो लक्ष्य पाने के लिए वैज्ञानिक विचार एवं कार्य-पद्धति की भी उतनी ही आवश्यकता है।

5. वैश्विक मूल्य :-

किसी जाति, समूह या देश विशेष से संबंध न होकर जिन मूल्यों का सरोकार संपूर्ण विश्व की प्रगति एवं भलाई से होता है, वे मूल्य वैश्विक मूल्य कहलाते हैं। इसमें सबके लिए स्वतंत्रता, न्याय एवं अवसर की समानता, निःशस्त्रीकरण, सभी प्रकार की दासताओं का उन्मूलन, रंग भेद जैसी घिनौनी व्यवस्था का बहिष्कार, कठोर शारीरिक यंत्रणाओं एवं मृत्युदण्ड जैसी घातक व्यवस्थाओं का निषेध एवं उन्मूलन आदि मूल्यों का समावेश किया जा सकता हैं।

6. पर्यावरण संबंधी मूल्य :-

आजकल विश्व के सभी राष्ट्रों के सामने पर्यावरण प्रदूषण की समस्या एक प्रमुख समस्या है। प्रदूषण के कारणों की जाँच एवं उसके निवारण के उपाय राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर किये जा रहे हैं। वनीय क्षेत्र में नये-नये प्रयोग किये जा रहे हैं ताकि, वनसंपदा सुरक्षित रहे और वनों का निरंतर संवर्धन हो सके। साथ-साथ उस पर निर्भर वन्यप्राणी व अन्य जीव भी संवर्धित हो सके। अतः पेड़-पौधो के प्रति सरोकार, पर्यावरण की शुद्धि के प्रति जागरूकता, वृक्षारोपण एवं वृक्षरक्षण आदि मूल्यों तथा जीवदया को हम इस श्रेणी में रख सकते हैं।

7. सांस्कृतिक मूल्य :-

सांस्कृतिक मूल्यों में उन सभी मूल्यों का समावेश होता है जो कि, हमारी सांस्कृतिक धरोहर को अखंड रखने एवं उसके विकास के द्वारा राष्ट्र में सांस्कृतिक एकता का वातावरण बनाये रखने में सहायक होते हैं। समूहों की संस्कृति भिन्न हो सकती हैं, किन्तु उसमें यदि एक-दूसरे की संस्कृति के प्रति सहिष्णुता एवं आदर का भाव होगा तो उन समूहों में एकता एवं सद्भाव बना रहेगा। सांस्कृतिक मूल्यों के अंतर्गत सहिष्णुता, दूसरों के धर्म तथा संप्रदाय के प्रति आदर की भावना आदि मूल्यों का समावेश होता हैं।

8. अन्य प्रकार :-

उपयुक्त मूल्यों के अतिरिक्त स्वास्थ्य एवं मनोविनोद संबंधित मूल्य, सौंदर्यबोध संबंधित मूल्य, धार्मिक मूल्य, आदि नाम गिनाये जा सकते हैं। कुछ मूल्य विधेयात्मक होते हैं तो कुछ निषेधात्मक।

1.7. मूल्य शिक्षा का अर्थ :-

'मूल्य शिक्षा क्या है?' यदि हम साधारणतया इस पर विचार करे तो यह कह सकते है कि, जो शिक्षा मूल्यों से संबंधित है वह मूल्य शिक्षा कही जाती है। शिक्षाविद् मूल्य शिक्षा का अर्थ अलग-अलग बताते हैं। कोई इसे चरित्र निर्माण की शिक्षा समझता है तो कोई व्यक्तित्व के पूर्ण विकास की शिक्षा समझता है। मूल्य शिक्षा का संबंध व्यक्ति के उन गुणों के विकास से है जो उसके व्यक्तित्व को प्रभावशाली बनाकर उसे समाज का एक महत्वपूर्ण उपयोगी अंग बना दे और साथ ही बालक को भविष्य में इस योग्य बना दे कि, वो दूसरों के हित में अपना हित समझे। सच्चे अर्थ में उसका व्यक्तित्व इस प्रकार उभर कर आये कि, वह समाज और राष्ट्र के लिए उपयोगी हो। कभी-कभी परिस्थितिवश उत्पन्न होने वाली उसकी संहारकवृत्ति सृजनात्मक प्रवृत्तियों में परिणित हो जाये। यह भी मूल्य शिक्षा देने का एक उद्देश्य है।

'मारिया मांटेसरी के शैक्षिक विचार' इस विषय पर शोधकर्ता वीरेन्द्र कुमार सिंह का कहना है कि, "मांटेसरी का मानना था कि, बच्चें स्वयं अपने चरित्र की रचना करते हैं और अपने अंदर उन गुणों का निर्माण करते हैं जिनकी हम प्रशंसा करते हैं। ये गुण बच्चों में हमारे आचरण के अनुकरण से या डाँटने-फटकारने से नहीं आतें, वरन् केवल उन गतिविधियों से आते हैं जो बच्चा उसे 6 वर्ष की आयु में प्राप्त करता है। इस काल में बच्चों को चरित्र के गुण कोई सीखा नहीं सकता। हम बस इतना ही कर सकते हैं कि, बच्चों को वैज्ञानिक आधार पर शिक्षा दे जिससे बच्चें बिना विघ्न और रूकावट के अपना कार्य ठीक से कर सके।"

1.8. शिक्षा में मूल्यों का स्थान :–

शिक्षा का मूल उद्देश्य है– बच्चों का सर्वांगी विकास करना। अपने भविष्य के जीवन में उत्तम नागरिक बनकर अपनी और समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति करना उसके दायित्व के अंतर्गत आता है। इस आवश्यकताओं की पूर्ति उत्तम नागरिक बनने से होती है। उत्तम नागरिक यानि मूल्यवान नागरिक। उत्तम नागरिक तभी बन सकेंगे जब बच्चें उत्तम बनेंगे और बच्चें उत्तम तभी बनेंगे जब उन्हें अच्छें शिक्षक पढ़ायेंगें।

1.8.1. प्राचीन भारतीय शिक्षा में मूल्यों का स्थान :–

भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम् संस्कृतियों में से एक है। इसके साथ संसार में जन्मी अनेक संस्कृतियाँ अब नाम मात्र बन चुकी हैं। लेकिन भारतीय संस्कृति आज भी पूर्ण प्रभाव से विद्यमान है। इसका कारण यह है कि, भारतीय संस्कृति मूल्य पर आधारित है। यह मूल्य प्राचीन भारतीय शिक्षा व्यवस्था में भी प्रचलित थें। प्राचीन काल में जो गुरूकुल शिक्षा रीति थी, उसमें मानक मूल्यों को प्रमुखता दी जाती थी।

बड़ों का आदर, छोटों से प्यार, दीनों पर करूणा, सहजीवियों से प्यार, दया, क्षमा, ममता, भक्ति, सहनशीलता, अहिंसा आदि मूल्य के आचरण के अंतर्गत आते हैं। इनके पालन से गुणवान व्यक्ति मूल्यवान भी बन जाते हैं। अब प्रश्न यह उठता है कि, ये सब मूल्य कहाँ से प्राप्त करें? कब से और कैसे प्राप्त करे? इस संदर्भ में 'छोटी उम्र में ही जो जो आदतें हम पर पडती हैं वहीं मृत्यु पर्यन्त रहती हैं।' अर्थात् जो जो मूल्य वांछित है विद्या की शुरूआत से ही होने चाहिए। अतः किन्डरगार्डन शिक्षा की पाठ्य पद्धति से लेकर प्रत्येक स्तर की पाठ्य पद्धति में इसको पर्याप्त स्थान देना चाहिए।

1.8.2. बुनियादी शिक्षा दर्शन में मूल्य शिक्षा :-

बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षो में भारतीय चिंतन को गांधीजी के विचारों एवं व्यवहार ने सबसे अधिक प्रभावित किया। गांधीजी का संपूर्ण जीवन दर्शन केवल उनके विचारों में ही नहीं, बल्कि उनके व्यक्तित्व में भी झलकता है। उनका संपूर्ण जीवन सनातन मूल्यों पर आधारित रहा है। परिणामतः उनके विचारों में मूल्यों की पक्षधारिता सर्वत्र दिखाई देती है। अपनी शिक्षा व्यवस्था के संबंध में सन् 1937 की वर्धा परिषद में बोलते हुए गांधीजी ने कहा था– 'अगर हम कोमी और अंतर्राष्ट्रीय संघर्ष को बंद करना चाहते है तो हमारे लिए जरूरी है कि, जिस शिक्षा की मैंने हिमायत की है उससे अपने बालकों को शिक्षित करके शुद्ध और सुदृढ़ आधार पर इसकी शुरूआत करें।' गांधीजी इसी नई तालीम को सच्चे मायनों में जिंदगी की तालीम बनाना चाहते थे।

1.9. परिवार, विद्यालय और समाज की मूल्य शिक्षा में भूमिका :

1.9.1. परिवार :-

जन्मते ही बालक परिवार का सदस्य हो जाता है। परिवार में रहकर जन्म से ही पारस्परिक व्यवहार के संस्कार एवं पारिवारिक कर्तव्यों की जानकारी भी पाता है। स्नेह, त्याग, दया, कर्तव्य, परोपकार, मैत्री आदि नैतिक मूल्यों की शिक्षा वह परिवार में ही पाता है। इसलिए परिवार को जीवन की शाश्वत पाठशाला कहा गया है।

घर या परिवार ही वह स्थान है जहाँ शिशु जनमोपरान्त सर्वप्रथम ज्ञानवर्धन करता है एवं संस्कार ग्रहण करता है। महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि, अभिभावकों का जीवन और घर का वातावरण आदर्श हो तभी बालक में आदर्श गुणों का संचार हो सकता हैं। अभिभावक वर्ग में माँ की जिम्मेदारी सबसे अधिक हैं। माँ यदि अपने बालक के सफल, सशक्त निर्माण और

सर्वांगी विकास के लिए कटिबद्ध हो जाए तो नई पीढ़ी का नव निर्माण करके राष्ट्र के विकास में चार चांद लगा सकती हैं। माँ की मानसिकता, गतिविधियाँ एवं क्रियाकलापों से बालक संस्कार ग्रहण करता है। अतः माँ को गर्भावस्था में तथा जन्म के उपरान्त सदैव अपने आपको, घर के वातावरण को पूरी तरह से संयमित, संतुलित व व्यवस्थित बनाए रखना चाहिए। माँ बालक की मात्र जननी ही नहीं हैं, परन्तु वह उसके भावि स्वरूप की निर्मात्री और सच्ची शिक्षिका भी हैं। माँ के अतिरिक्त परिवार के अन्य सदस्य भी बालक के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पिता बालक का सर्वांगी पूर्ण संरक्षक है। पिता की छत्रछाया में ही बालक संभावित बुराईयों से बच सकता है और सदाचार को अनुसरण करता रहता है।

1.9.2. विद्यालय :-

ऐसे देखा जाए तो मूल्यों के निर्माण की नीव परिवार में ही रखी जाती है, परन्तु उस पर दृढ़ ढाँचा बनाने का कार्य विद्यालय करता है। विद्यालय में प्रवेश के उपरान्त ही बालक प्रथम बार अपने माता-पिता एवं अन्य परिवारजनों से दूर होता है। विद्यालय के सोपानों से परिचित होता हैं ऐसे में यह आवश्यक है कि, विद्यालय का वातावरण बाल सुलभ इच्छाओं के अनुरूप हो, वहाँ उसके आकर्षण और मनोरंजन के साधन पर्याप्त हो।

शिक्षा संस्कारों की जननी है। अतः हमें शिक्षा के उद्देश्य का निर्धारण राष्ट्र के अनुरूप करना होगा। मूल्यपरक शिक्षा के विकास के लिए विद्यालय का वातावरण प्रजातांत्रिक एवं उत्साहवर्धक होना चाहिए। आज आवश्यकता है कि, शिक्षा के उन आदर्शो की जो सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् के मूल्य को समाज में पुनः स्थापित कर सके। इसके लिए शिक्षा से बड़ा दिशा निर्देशक कोई नहीं हो सकता। इसलिए विद्यालय में अध्यापक का स्थान सर्वोपरि स्वीकार किया गया है। भारत जैसे देश में जहाँ गुरु को पूजनीय माना गया है, वहाँ शिक्षक शिक्षा पाठ्यक्रम में संशोधन कर राष्ट्रीय स्तर पर एक

मूल्यपरक एवं समान पाठ्यक्रम को लागू करने की आवश्यकता को सराहना चाहिए।

1.9.3. समाज :-

शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है, जो व्यक्ति को प्रत्यक्ष लाभ पहुँचा कर राष्ट्र एवं समाज को अप्रत्यक्ष लाभ पहुँचाती है। क्योंकि, बालक जैसे ही अनुकरण करने योग्य होता है, सामाजीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है तथा जैसे ही उसमें समझ आती है, वह संस्कृति का ग्रहण करने लगता है। इस प्रकिया को पूर्ण करने के लिए परिवार तथा विद्यालय के अतिरिक्त मुख्य भूमिका समाज की रहती है।

1.10. मूल्य विकास के लिए शिक्षा :-

पाठ्यचर्या विधालय दर्शन की अभिव्यक्ति होती है। इसलिए उसमें ऐसे घटकों का समावेश हो सकता हैं, जो भौतिक परिवेश, सांगठनिक स्वास्थ्य और मानवीय संबंधों से जुड़े; कतिपय महत्वपूर्ण मूल्यों को जैसे अनुशासन, स्वच्छता, समयनिष्ठा, लोकतांत्रिक व्यवहार, प्रतिबद्धता, व्यवस्था, शिष्टाचार कायम रखने की जिम्मेदारी, पर्यावरण रक्षा, दूसरों के धर्म के प्रति आदर की भावना, जाति और समुदाय के प्रति सम्मान को प्रतिबिंबित करते हैं।

विद्यालयों के लक्ष्यों का स्पष्ट वर्णन करके कर्मचारियों एव विद्यार्थियों की पहल से अनुशासन विकसित करके, जहाँ जरूरी हो वहाँ शिकायतें दूर करवाने के लिए आदान-प्रदान के तरीके से काम लेकर, कल्याण सेवाओं के द्वारा, जरूरतमंद विद्यार्थियों को निःशुल्क शिक्षा और सहायता सुलभ करा कर, विद्योपार्जन से पिछड गए बच्चों को ठुकरा देने की बजाय उनकी कमियों को दूर करके उनका पुनर्मूल्यांकन करके तथा अपनी रूचियों के अनुसार सभी विद्यार्थियों के लिए खेल-कूद अन्य कार्यकलाप और कार्यक्रमों में भाग लेकर सुनिश्चित करने उपयुक्त मूल्यों को प्राप्त किया जा सकता हैं।

1.10.1. शिक्षा में मूल्य शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया :–

इस संदर्भ में विद्यालयी शिक्षा के लिए विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा परिचर्चा दस्तावेज (एन.सी.ई.आर.टी.) –2000 का दृष्टिकोण संभाव्य रूप से योग्य लगता है। इसके अनुसार शिक्षण–अधिगम के प्रति संपूर्ण दृष्टिकोण को निम्नलिखित किस्म का रूझान देना चाहिए :

- विभिन्न विषय–क्षेत्रों में सहज समाहित मूल्यों को उभारना;
- बच्चों को शंका उठाने, हिस्सा लेने और पारस्परिक सम्मान प्रदर्शन के अवसर सुलभ कराना;
- कक्षा में चलाने वाले कार्य के क्रम में लोकतांत्रिक सिद्धांत सीखने के अवसर सुलभ कराना;
- लिंग, जाति, वर्ग और धर्म की समानता का ज्ञान प्राप्त कराना;
- मानवाधिकारों, खास तौर से बच्चों के अधिकारों, पर्यावरण संरक्षण और स्वस्थ जीवन आदि के बारे में ज्ञान प्राप्त कराना;
- मूल्यों के संप्रेषण के लिए स्वयं कक्षा के वातावरण को तनावरहित और लोकतांत्रिक बनाना जरूरी है।

मूल्यों का विकास सुनिश्चित करने के लिए शिक्षण प्रक्रिया में पारस्परिक चर्चा, खास खास चीजें दर्शाने की पद्धति, प्रदर्शनियों, मूल्यों के स्पष्टीकरण और उनके अभ्यास, खुले सत्रों, अंतर्वस्तु अध्यापन आदि का समावेश किया जा सकता हैं। विद्यार्थियों के मन में मूल्यों के प्रति आदर जगाने के लिए सलाहकारों, शारीरिक शिक्षा–अध्यापकों, विशेष अध्यापकों का भी उपयोग किया जा सकता हैं।

1.11. पाठ्यपुस्तकें और पूरक पठन :-

बहुत सारे सार्वजनीन मानवीय मूल्य जो विभिन्न विषय क्षेत्रों में सहज समाहित हैं। इन्हें पाठ्यपुस्तकों में स्थान दिया जा सकता हैं। पाठ्यपुस्तक की अंतर्वस्तु को इस प्रकार से विकसित करना चाहिए कि, ये मूल्य उसमें स्पष्ट रूप से प्रतिबिंबित हो और दबे-ढ़के नहीं रह जाए। इसलिए पाठ्यपुस्तकें सावधानी से लिखी जानी चाहिए और साथ ही समय-समय पर उनकी समीक्षा करके पता लगाना चाहिए कि, वे कौन से मूल्य संप्रेषित कर रही हैं।

मानवीय तथा सार्वजनीन मूल्यों का विकास करने के लिए पूरक पाठ्य सामग्री का भी उपयोग किया जाना चाहिए। अध्ययन सामग्री में मूल्यों की बात सीधे नहीं की जानी चाहिए, बल्कि उन्हें कहानियों, नीति-कथाओं और जीवनियाँ विभिन्न सांस्कृतिक एवं धार्मिक परंपराओं की पृष्ठभूमि से जुड़ी होनी चाहिए।

1.11.1. सह-पाठ्यचर्या कार्यकलाप :-

सह-पाठ्यचर्या कार्यकलाप मूल्य संप्रेषण का एक अन्य सशक्त माध्यम है। इन कार्यकलापों में बालमेलों, प्रदर्शनी, नाटक, क्रीडा, स्काउट्स और गाइड्स, एन.एस.एस., एन.सी.सी. आदि का समावेश हैं। उसके माध्यम से जिस प्रकार से मूल्य प्रतिबिंबित होते हैं उसका वर्णन विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा परिचर्या दस्तावेज (एन.सी.ई.आर.टी.) 2000 के अनुसार नीचे किया जा रहा हैं :

- खेल आत्मानुशासन, व्यवस्था, नियमितता, समयनिष्ठता, सह-अस्तित्व, ईमानदारी, साझेदारी, सहयोग और स्वस्थ प्रतियोगिता के मूल्य संप्रेशित करने हैं।
- नाटक द्वारा आंतरसांस्कृतिक सहिष्णुता, सत्यनिष्ठा आदि से संबद्ध भावनाओं की अभिव्यक्ति करके मूल्यों को मन में बैठा सकते हैं। इसके लिए उपयुक्त विषयों का उपयोग अपेक्षित है।

- सार्वजनीन मानवीय मूल्यों से संबंधित संदेश संप्रेषित करने के लिए प्रदर्शनियों, बाल–मेलों, निर्देशों आदि का उपयोग किया जा सकता हैं। प्रदर्शनियों के लिए मूल्य आधारित विषय हो सकते है, जिनसे उघमशीलता, सृजनशीलता, पर दुःखकातरता, भारत की सांस्कृतिक विरासत के प्रति सजगता आदि के गुणों का विकास हो सकता हैं।
- व्याख्यानों, सामुदायिक गायन कार्यक्रमों, सांस्कृतिक/ थियेटर/शिल्प/सृजनशील मंडलियो द्वारा प्रस्तुत कार्यक्रमों का प्रयोग विद्यार्थियों में मूल्यों के प्रति सजगता उत्पन्न करने के लिए किया जा सकता हैं।
- धार्मिक त्यौहारों और राष्ट्रीय महत्व की घटनाओं के उपलक्ष्य में मनाए जाने वाले उत्सवों का भी भारतीय संविधान में समाविष्ट कई मूल्यों के लिए महत्वपूर्ण फलितार्थ है– जैसे सामाजिक, सांस्कृतिक और राष्ट्रीय एकता के लिए ।

1.11.2. मार्गदर्शन और परामर्श :–

मार्गदर्शन और परामर्श का प्रयोजन विद्यार्थियों के बीच उदार मानसता, संवेदनशीलता, परदुःखकातरता, सहानुभूति, समस्या–समाधान कौशल आदि का विकास करना है। इनमें से प्रत्येक संविधान में संजोए मूल्यों और विश्वबंधुत्व की शिक्षा ग्रहण करने की दृष्टि से महत्वपूर्ण फलितार्थ से युक्त है। परामर्शदाता के व्यक्तित्व, क्रियाकलाप और मार्गदर्शन तथा परामर्श की प्रक्रियाओं का रूझान न केवल विद्यार्थियों के मानस में, बल्कि अध्यापकों के भी मन में मूल्यों की प्रतिष्ठा करने की दिशा प्रदान करता है।

1.12. मूल्य शिक्षा के प्रति शिक्षक की भूमिका :–

संपूर्ण शिक्षा प्रक्रिया की श्रृंखला में अध्यापक की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण समझी गई है। शासकीय स्तर पर मूल्य शिक्षा की चाहे कितनी ही मनोहर योजना बनाली जाए, किन्तु अध्यापक यदि उसे ठीक ढंग से

कार्यान्वित न करे तो वह योजना कदाचित सफल नहीं हो सकती । अतः सबसे पहले अध्यापकों में विविध नैतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों का अभ्यान्तरीकरण अत्यंत आवश्यक हैं। दीप से दीप जलता है वैसे ही नैतिकता, नैतिकता को जन्म देती है। अध्यापक छात्रों के सामने नैतिक आदर्श प्रस्तुत करें जिन्हें देखकर तथा अनुभव करके विद्यार्थी भी मूल्यों का आचरण कर सकें।

बच्चों को शिक्षा देने के लिए सबसे पहले तो उन्हें प्यार करना चाहिए। शिक्षक जब बच्चों को प्यार करता है, अपना हृदय उन्हें अर्पित करता है, तभी वह उनमें श्रम की खुशी, मित्रता और मानवीयता की भावनाएँ जगा सकता है। शिक्षक को बाल-हृदय की राह ढूंढ़नी चाहिए, केवल तभी वह बच्चों को अपने परिवार, स्कूल और देश से प्रेम करना सिखा सकेगा, उनमें श्रम करने और ज्ञान पाने की अभिलाषा जगा सकेगा। बाल-हृदय की गहराइयों में पैठना ही शिक्षण विधि का सार है, जिसका सूत्रधार शिक्षक ही है।

1.13. विभिन्न शिक्षा आयोगों व समितियों के मूल्य शिक्षा पर विचार :-

भारतीय शिक्षा आयोगों व समितियों ने एक स्वर में नैतिक मूल्यों की शिक्षा को शिक्षा का अनिवार्य अंग कहा है। शिक्षा को विभिन्न स्तरों में इनके सम्मिलन को आवश्यक बताया है।

1.13.1. राधाकृष्णन आयोग (1948-49) :-

राधाकृष्णन आयोग ने मूल्य शिक्षा को पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग माना है। आयोग के अनुसार, विद्यालय स्तर पर छात्रों को नैतिक और धार्मिक सिद्धांतो को व्यक्त करने वाली कहानियाँ पढाई जाएँ। छात्रों को महान व्यक्तियों की जीवनियाँ पढ़ाई जाए, जीवनियों में महान व्यक्तियों के उच्च विचारों और श्रेष्ठ भावनाओं का समावेश किया जाए।

1.13.2. श्री प्रकाश समिति (धार्मिक एवं नैतिक समिति–1959) के सुझाव :

इस समिति की अध्यक्षता श्री प्रकाश ने की व धार्मिक तथा नैतिक शिक्षा के संबंध मे यह सुझाव दिया कि, विद्यार्थियों को सब धर्मो के आधारभूत विचारों की शिक्षा तुलनात्मक विधि से दी जाए। छात्रों को महान धार्मिक नेताओं की जीवनियों और शिक्षाओं के सार से अवगत कराया जाए। जैसे–जैसे छात्रों का मानसिक विकास होता जाए वैसे–वैसे उनकों नैतिक, दार्शनिक और अध्यात्मवादी सिद्धांतो से परिचित कराया जाए।

1.13.3. शिक्षा आयोग के सुझाव (1964–66) :–

राष्ट्रीय शिक्षा आयोग जिसकी अध्यक्षता प्रो. दौलत सिंह कोठारी ने की, उन्होंने धार्मिक शिक्षा के संबंध में अनेक विचार व्यक्त किये। विद्यालय स्तर में विद्यालयों को आधारभूत नैतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा दी जाए तथा सत्य, ईमानदारी, सामाजिक उत्तरदायित्व और दरिद्रों के प्रति सहानुभूति इत्यादि। उक्त मूल्यों को विद्यालय के कार्यक्रमों का अभिन्न अंग बनाया जाएँ, मूल्यों की शिक्षा देने के लिए समय तालिका में प्रति सप्ताह कुछ घण्टें निर्धारित किया जाए। प्राथमिक स्तर पर भारत और संसार के महान धर्मो से चुनी गई रोचक कहानियों द्वारा आधाभूत मूल्यों और समस्याओं पर शिक्षक और छात्रों द्वारा विचार विमर्श किया जाए। माध्यमिक स्तर की उच्च कक्षाओं में महान धार्मिक और आध्यात्मिक नेताओं की कहानियाँ पढाई जाए। इसे सफल बनाने के लिए शिक्षक द्वारा प्रयास होना चाहिए।

राष्ट्रीय आयोग (1964–66) ने लिखा है कि, नैतिक व मूल्य शिक्षा प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों विधियों से दी जानी चाहिए, जिसमें अप्रत्यक्ष प्रभाव के कार्य पर अधिक बल दिया गया हैं।

1.13.4. शिक्षा पर राष्ट्रीय नीति का मसौदा (1979) में मूल्य शिक्षा संबंधी सूझाव :-

मूल्य शिक्षा के संदर्भ में इस में रूढ़िवाद, धार्मिक कट्टरता, हिंसा, अंधविश्वास और भाग्यवाद को समाप्त करने की बात की गई है। इस शिक्षा नीति का कहना था कि, सारभूत मूल्यों के गिरते हुए स्तर के प्रति बढ़ती चिन्ता और समाज में बढ़ती हुई कटुता से यह जरूरी हो गया है कि, पाठ्यचर्या में पुनर्समायोजन लाया जाए, ताकि शिक्षा को सामाजिक, नीतिपरक और नैतिक मूल्य पैदा करने के लिए सशक्त साधन बनाया जा सके। और इस निर्णायक भूमिका के अतिरिक्त, मूल्य शिक्षा की एक गहन और ठोस विषय वस्तु हमारी विरासत, राष्ट्रीय और सार्वभौमिक उद्देश्य और विचारों पर आधारित है। इसमें इस पहलू पर मुख्य रूप से जोर दिया जाना चाहिए।

1.13.5. नई शिक्षा नीति और मूल्यपरक शिक्षा (1986) :-

शिक्षा समाज रूपी व्यवस्था का एक अभिन्न अंग है। आज समाज में नैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक मूल्यों में गिरावट आई है। अतः शिक्षा के क्षेत्र में भी यह गिरावट अनुशासन हीनता, अध्ययन अध्यापन में भी अपेक्षित स्तर का अभाव, अनुत्तरदायित्व, स्वकर्तव्य के प्रति उदासीनता, श्रम के प्रति उपेक्षा आदि विविध रूपों में दृष्टिगोचर होती है। अतः आज मूल्यपरक शिक्षा की आवश्यकता बड़ी तीव्रता से अनुभव की जा रहीं है। नई शिक्षा नीति में भी इस ओर अपेक्षित ध्यान दिया गया है।

1.13.6. राममूर्ति समीक्षा समिति (1990) :-

इस समिति का सुझाव था कि- मूल्य शिक्षा को ऐसी सतत प्रक्रिया के रूप में माना जाए, जिसे व्यक्ति की बाल्यावस्था से किशोरावस्था और फिर वहाँ से प्रौढ़ता तक विकास की प्रक्रिया के रूप में धारण किया जाए।

1.14. भारतीय संविधान और राष्ट्रीय मूल्य :-

जीवन-मूल्यों के स्वरूप निर्धारण संबंधी मार्गदर्शन की दृष्टि से हमारे संविधान की प्रस्तावना विशेष महत्वपूर्ण है। यह प्रस्तावना उन उद्देश्यों,

आदर्शो और सिद्धातों का वर्णन करती है, जिनके प्रकाश में हमारा संविधान निर्मित हुआ है। संविधान की प्रस्तावना में कहा गया है :

"भारत को संप्रभु, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष एवं लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके सभी नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए तथा उन सबमें व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता सुनिश्चित करने हेतु बन्धुत्व बढ़ाने के लिए, दृढ संकल्प होकर हम भारत के लोग इस संविधान सभा में 26 नवम्बर,1949 के दिन एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते है।"

यह प्रस्तावना भारतीय संविधान का हृदय है, चिंतन है, दर्शन है। यह प्रस्तावना एक ओर हमारी संस्कृति की उदारता प्रकट करती हैं, तो दूसरी ओर यह मूल्यपरक शिक्षा की दिशा भी बोध कराती है। इस संदर्भ में नई शिक्षा नीति (1979) के एक प्रस्ताव में ठीक ही कहा गया है कि, "हमारे संविधान की प्रस्तावना एवं उपयुक्त राष्ट्रीय लक्ष्यों को रेखांकित करने वाले बुनियादी एवं अभीष्ट मूल्य हमारी मूल्यपरक शिक्षा का आधार बनने चाहिए। हमारे शालेय पाठ्यक्रम में मूल्यपरक शिक्षण को महत्वपूर्ण स्थान मिलना चाहिए और इस मूल्यपरक शिक्षा की ओर आवश्यक ध्यान एवं समय देना चाहिए।"

1.15. N.C.F. 2005 में मूल्य शिक्षा संबंधी सुझाव :-

डॉ. यशपाल की अध्यक्षता में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद द्वारा समस्त राष्ट्र के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा- 2005 तैयार की गई। जिसमें मूल्यपरक शिक्षा को शिक्षा का अभिन्न अंग समझा गया है। आज की शिक्षा को मूल्य शिक्षा की सख्त जरुरत है - ऐसा उनका स्पष्ट मत है। इस राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा- 2005 में मूल्यों एवं शांति की बात अध्याय 3.8 में की गई है साथ में शिक्षण में

मूल्य संबंधित रणनीतियाँ भी कैसी होनी चाहिए, इसके लिए सुझाव दिये गये है।

इस संदर्भ में शोधकर्ता के इस शोधकार्य का संपूर्ण हार्द व आधार राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा–2005 ही है। अतः इस में दिये गये अगत्य के सुझाव व महत्वपूर्ण विचार निम्न रूप में है :

हम अभूतपूर्व हिंसा के दौर में जी रहे हैं। इस दौर में असहिष्णुता, कट्टरवाद, विवाद ओर विस्वरता की निरंतर आशंकाएँ हैं। नैतिक कार्य, शांति और कल्याण कार्यो के सामने नयी चुनौतियाँ पेश आ रहीं हैं। अनसुलझे विवादों से कुछ युद्ध और हिंसा पैदा होती है, हालाकि विवाद से हमेशा युद्ध और हिंसा नहीं होतें। हिंसा और युद्ध विवाद की कई संभावित प्रतिक्रियाओं में से है। इसलिए शिक्षा में ऐसी बातें व विचार को बुने हुए होने चाहिए, जो संपूर्ण मनुष्यजाति के लिए जीवन का संदेशक हो। शांति के लिए शिक्षा व नैतिक विकास के साथ उन मूल्यों, दृष्टिकोण और कौशलों के पोषण पर बल देना है जो प्रकृति और मानव जगत के बीच सामंजस्य बिठाने के लिए आवश्यक हैं। इसमें जीने का हर्ष, प्रेम, उम्मीद और साहस के आंतरिक संसाधनों के साथ व्यक्तित्व का विकास शामिल है। इसमें मानव अधिकार, न्याय, सहिष्णुता, सहकार, सामाजिक दायित्व, सांस्कृतिक विविधता का सम्मान शामिल हैं। समानता और सामाजिक न्याय–जिसमें गरीबों, वंचितों, शोषितों के उत्पीडन न किए जाने संबंधी दृष्टिकोण पर जोर हो ओर जिसमें अहिंसामूलक समाज व्यवस्था के विकास पर जोर हो उसे शांति व मूल्य शिक्षा का आधार होना चाहिए।

नैतिक विकास का मतलब इस तरह के आदेश देना नहीं है कि, 'यह करो', और 'यह न करो', बल्कि इसके माध्यम से विद्यार्थी यह सीख सकते हैं कि, सही क्या है, दया क्या है और व्यक्तिगत और सामाजिक मूल्यों के संदर्भ मे साझे हित में क्या उचित है। मूल्यों की शिक्षा का मतलब हमेशा से वांछनीय व्यवाहर को प्रेरित करना रहा है। इसका मतलब 'अस्वीकृत' और

'अवांछनीय' व्यवहार और भावनाओं का दमन और खंडन भी रहा है। इस कारन विद्यार्थी अक्सर बिना किसी प्रतिबद्धता के अपनी सही भावना और विचार को छिपाकर बस जबानी तौर पर नैतिक मूल्यों की बात करने लगता है। अतः जरूरत बातचीत से हटकर अनुभवों और चिंतन-मनन तक जाने की है, जहाँ नैतिक व्यवहार के लिए कोई भी सरल प्रस्ताव या अपागम नहीं हो सकता, बल्कि मानव व्यवहार और रूचि से संबंधित जटिल प्रयोजनों और नैतिक दुविधाओं पर विचार कर उन्हें समझा जाए।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा -2005 के मूल्य शिक्षा संबंधी सुझाव निम्नलिखित है :

- शिक्षा को उन मूल्यों को प्रसारित करने में सक्षम होना चाहिए जो शांति, भावना और सांस्कृतिक विविधता वाले समाज में सहिष्णुता को पोषित करें।
- वर्ष 1975 के बाद पाठ्यचर्या संबंधी कार्य को जारी रखते वर्ष 1984 में पाठ्यचर्या की एक रूपरेखा भी तैयार की, उसका उददेश्य था पूरे देश में गुणवत्ता के स्तर पर स्कूली शिक्षा को तुलनीय अर्थात् लगभग समान बनाना।
- इनके द्वारा राष्ट्रीय मूल्यों को हर व्यक्ति की सोच और जिंदगी का हिस्सा बनाने की कोशिश की जाएगी। इन मूल्यों में ये बाते शामिल हैः *सामाजिक न्याय, समानता, वैचारिक स्वातंत्र्य, वसुधैवकुटुंबकम् भावना, सांस्कृतिक, लोकतंत्र, धर्मनिरपेक्षता, पर्यावरण संरक्षण, स्त्री-पुरुष समानता, सामाजिक समता, परिवार महत्व, वैज्ञानिक दृष्टिकोण।*
- शिक्षा-व्यवस्था का प्रयास यह होगा कि, नयी पीढ़ी में विश्वव्यापी दृष्टिकोण सुदृढ़ हो तथा अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग और शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व की भावना बढ़े।

- शांति की संस्कृति का निर्माण करना शिक्षा का निर्विवाद उद्देश्य है।
- सभी को सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक न्याय उपलब्ध कराना लोकतंत्र को दृढ करने के लिए अनिवार्य हैं।
- कार्य व विचारों की स्वतंत्रता हमारे संविधान में निहित एक मूलभूत मूल्य है।
- शिक्षा के समक्ष सबसे बड़ी राष्ट्रीय चुनौती है- हमारे सहभागिता आधारित लोकतंत्र व संविधान में प्रतिस्थापित मूल्यों को सुदृढ़ करना।
- शांति व सद्भावपूर्ण सह-अस्तित्व से संबंधित मूल्यों की ओर अभिमुखीकरण होना चाहिए। शिक्षा में गुणवत्ता के अंतर्गत जीवन के सभी आयामों में गुणवत्ता संबंधी सरोकार शामिल है। यही वजह है कि, शांति के लिए चिंता, पर्यावरण संरक्षण व सामाजिक परिवर्तन के प्रति झुकाव को मात्र मूल्यों की तरह नहीं बल्कि गुणवत्ता के मूलभूत तत्वों की तरह देखना चाहिए।
- असमान लैंगिक संबंध न केवल वर्चस्व को बढ़ावा देते है, बल्कि वे लड़के-लड़कियों में तनाव भी पैदा करते हैं तथा उनकी मानवीय क्षमताओं के पूर्ण विकास की स्वतंत्रता में बाधा पहुचाते हैं। यह सबके हित में है कि, मनुष्य को लिंग असमानताओं से मुक्त कराया जाए।
- शिक्षा के लक्ष्य समाज की मौजूदा महत्वाकांक्षाओं व जरूरतों के साथ शाश्वत मूल्यों तथा सामाज के तात्कालिक सरोकारों सहित वृहद् मानवीय आदर्शो को भी प्रतिबिंबित करते हैं। किसी भी खास समय और स्थान के संदर्भ में इन्हें व्यापक और शाश्वत मानवीय आकांक्षाओं और मूल्यों की समकालीन और प्रासंगिक अभिव्यक्त किया जा सकता है।
- जिन सामाजिक सिद्धांतों की पहले चर्चा की गई है वे सामाजिक मूल्यों को परिप्रेक्ष्य प्रदान करते हैं, जिसमें हम अपने शैक्षिक उद्देश्यों

को रख सकते हैं। पहला है– लोकतंत्र, समानता, न्याय, स्वतंत्रता, परोपकार, धर्मनिरपेक्षता, मानवीय गरिमा व अधिकार तथा दूसरे के प्रति आदर जैसे मूल्यों के प्रति प्रतिबद्धता। शिक्षा का उद्देश्य कारण और समझ पर आधारित इन्हीं मूल्यों के प्रति प्रतिबद्धता का निर्माण करना होना चाहिए। इसलिए पाठ्यचर्चा में स्कूलों के लिए वह गुंजाईश जरूर होनी चाहिए, ताकि वह संवाद एवं विमर्श के लिए पैदा करते हुए बच्चों में इस तरह की प्रतिबद्धता का निर्माण कर सकें।

1.16. अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व :–

आज हमारे नैतिक मूल्य सुबह कुछ होते हैं और रात को कुछ ओर हो जाते हैं। ये मूल्य ऐसे ही बदल जाते हैं जैसे कि, तेज हवा के झोंकों से बादलों की दिशा बदल जाती है। मानव के इतिहास से भी पुराने हमारे रीति–रिवाज़ एवं संस्थाए हमारे देखते ही देखते पिघल जाते हैं, मानों इत्र लगाने अथवा धूम्रपान करने जैसी कोई आदत हो, जिसे जब–तब अपना ली और छोड़ दी। हमारे नैतिक मूल्यों की 'नर्स' और वांछित सामाजिक व्यवस्था की आधारशिला परिवार रुपी संस्था ने आज शहरी औद्योगीकरण एवं व्यक्तिवाद के आगे घूटने टेक दिये हैं।

इस संदर्भ में प्रो. कृष्ण कुमार का विचार योग्य दिशा में निर्देश करता है– "आज की शिक्षा व्यवस्था में एक अजीब तरह की कठोरता है। यह बंधी हुई है ऐसे नियमों से जिनके कारण हम खुद ही कुछ नया करने से डरते है और बच्चों को भी डराते हैं। इस कमजोरी को अगर हम दूर कर सके तो संविधान द्वारा निर्धारित उस उद्देश्य को जिसमें एक लोकतांत्रिक समाज बनाने की बात कही गई है और उस समाज के लिए एक ऐसा नागरिक बनाने का विचार है जो खुद सोच सके, निर्णय ले सके तथा कठिन से कठिन प्रश्न से जूझ सके, हम पूरा कर सकेंगे।"

आज चारों तरफ हिंसा, अराजकता और भ्रष्टाचार की भयावह स्थिति व्याप्त है। शायद ही ऐसा कोई दिन गुजरता हो जब समाचारपत्रों में उपर्युक्त आशय की सुर्खियाँ मुख्य पृष्ठ पर न दिखाई देती हो, वर्तमान समय में अपराधों का ग्राफ दिन-बदिन बढ़ता जा रहा है। आज जीवन के सभी क्षेत्रों में नैतिक मूल्यों की भारी कमी तथा वर्तमान विश्व में मूल्यपरक शिक्षा पर बल देने पर जोर दिया जा रहा है। हमारे कर्णधारों को समझ में भी यह बात आ गयी है कि, मूल्यों की पुनः प्रतिष्ठा के अभाव में शिक्षा में गुणात्मक सुधार की आशा एक मृगमरीचिका ही सिद्ध होगी।

फिर भी इस संदर्भ में देखा जाये तो शिक्षा ही सामाजिक परिवर्तन का सशक्त माध्यम है। शिक्षा राष्ट्रीय एवं सामाजिक मूल्यों की संरक्षक शक्ति भी है। हमारे राष्ट्रीय निर्धारको ने राष्ट्रीय योजनाओं में शिक्षा के मूल सिद्धांतों का सैद्धांतिक रूप से स्थान दिया भी है। इन सबके बावजूद शिक्षा मानवीय मूल्यों की स्थापना में असफल ही रही है। दुर्भाग्य है देश का कि, आज मनुष्य भौतिकवाद की ओर भाग रहा है। अभिभावक अपने बालक का भविष्य सुखमय बनाने के लिए गगनचुम्बी अटालिकाए बनाने को लालायित है। परन्तु आदर्श एवं सफल जीवन का भवन, जो नैतिक गुणों की नीव पर आधारित है उसको बनाने की सहज ही अवहेलना कर देता है।

वैसे तो नैतिक शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है, परन्तु नैतिक शिक्षा की सर्वाधिक आवश्यकता बाल्यकाल एवं किशोरावस्था में होती है। नैतिक शिक्षा बालकों पर थोपी नहीं जा सकती, जैसे न ही उसके लिए आदेश-निर्देश प्रभावी होते हैं। सच्ची नैतिकता तो जीवन के कठिन संघर्षो से प्राप्त होती है। छात्र को नैतिक शिक्षा देने से पूर्व शिक्षक का नैतिकीकरण भी आवश्यक हो जाता है। इस संदर्भ में शोधकर्ता द्वारा इस शोधकार्य को पाठ्यपुस्तक, जो प्रारंभिक स्तर की कक्षा 5,6,7 में शामिल है, उसका मूल्य संबंधी विषयवस्तु को राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005 द्वारा प्रस्तावित मूल्य शिक्षा संबंधी मूल्यों से हैं। जिसमें शोधकर्ता द्वारा एन.सी.एफ. 2005

में सम्मिलित मूल्यों को राज्य के पाठ्यपुस्तकों में उपलब्ध है या नहीं यह जानना है।

1.17. समस्या कथन :-

प्रारंभिक स्तर की पाठ्यपुस्तकों में सम्मिलित मूल्य शिक्षा की विषयवस्तु का विश्लेषणात्मक अध्ययन

1.18. शोध के न्यादर्श :-

प्रस्तुत अध्ययन में एन.सी.एफ. 2005 के मूल्य शिक्षा अंतर्गत गुजरात राज्य शाला पाठ्यपुस्तक मंडल, गांधीनगर द्वारा निर्मित प्रारंभिक स्तर की पाठ्यपुस्तकों में से मूल्य शिक्षा आधारित मूल्यों का कक्षा 5,6,7 की पाठ्यपुस्तकों का विश्लेषणात्मक चयन किया गया है।

1.19. समस्या का सीमांकन :-

प्रस्तुत शोधकार्य में निम्नलिखित मर्यादा है :

1. प्रस्तुत शोधकार्य प्रारंभिक स्तर की कक्षा 5,6,7 की पाठ्यपुस्तकों पर किया गया हैं।
2. प्रस्तुत शोधकार्य में एन.सी.एफ. 2005 के अंतर्गत दर्शायें तथा प्रारंभिक स्तर के पाठ्यपुस्तकों में दर्शित मूल्यों को लेकर उनका पाठ्यपुस्तकों के आधार पर विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है।
3. प्रस्तुत शोधकार्य में प्रारंभिक स्तर में मूल्यों का छात्रों के वर्तन पर पडने वाले प्रभाव के बारे में निरीक्षण द्वारा जानकारी प्राप्त की गई है।
4. प्रस्तुत शोधकार्य गुजरात राज्य शाला पाठ्यपुस्तक मंडल, गांधीनगर के प्रारंभिक स्तर की कक्षा 5,6,7 में सम्मिलित मूल्यों पर आधारित विषयवस्तु का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है।

1.20. शोध के उदेश्य :-

प्रस्तुत शोधकार्य में निम्नलिखित उदेश्य है :

1. प्रारंभिक स्तर की पाठ्यपुस्तकों में कक्षा पांचवीं की पाठ्यपुस्तकों की

विषयवस्तु में सम्मिलित मूल्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना।

2. प्रारंभिक स्तर की पाठ्यपुस्तकों में कक्षा छठवीं की पाठ्यपुस्तकों की विषयवस्तु में सम्मिलित मूल्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना।

3. प्रारंभिक स्तर की पाठ्यपुस्तकों में कक्षा सातवीं की पाठ्यपुस्तकों की विषयवस्तु में सम्मिलित मूल्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना।

4. प्रारंभिक स्तर की कक्षा 5,6 व 7 की पाठ्यपुस्तकों में सम्मिलित मूल्यों के आधार पर छात्रों के वर्तन संबंधित मूल्यों की जानकारी प्राप्त करना।

उपर्युक्त तमाम विगतो में मूल्य संबंधी बात की गई है। कोई भी शोधकार्य में शोधकर्ता को दिशा सूचक संबंधित साहित्य का पुनरावलोकन होता है जो अगले अध्याय में प्रस्तुत है।